RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452 Raaso
Refreed Journal

रासो

अन्तर्विषयी त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-18, अंक-3, जून जुलाई अगस्त 2025

रासो
त्रैमासिक शोध पत्रिका
2005
॥ स्वस्ति पन्थामनु चरेम॥

RNI No. RAJHIN/2007/26996
ISSN 0976-7452Raaso
Refreed Journal

रासो

इतिहास, संस्कृति, साहित्य एवं दर्शन की त्रैमासिक शोध पत्रिका

वर्ष-18 **अंक - 3** **जून-जुलाई-अगस्त-2025**

सम्पादक
डॉ. दिनेश चन्द्र शर्मा

निदेशक
कॉम्पिटिशन प्लस संस्थान, ग्रुप ऑफ इन्स्टिट्यूशन्स, अजमेर (राजस्थान)

संरक्षक

* **प्रो. जे. पी. शर्मा** - पूर्व कुलपति, मोहनलाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान)

सलाहकार मण्डल

* **प्रो. विभा उपाध्याय** - प्रोफेसर, इतिहास एवं भारतीय संस्कृति विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राज.)
* **नर्मदा प्रसाद उपाध्याय** - प्रसिद्ध साहित्यकार तथा संस्कृति चिंतक, इन्दौर (मध्य प्रदेश)
* **प्रो. टी.के. माथुर** - पूर्व अध्यक्ष, इतिहास विभाग महर्षि दयानन्द सरस्वती विश्वविद्यालय, अजमेर (राज.)
* **डॉ. रमेश अग्रवाल** - पूर्व स्थानीय सम्पादक, दैनिक भास्कर, अजमेर (राजस्थान)
* **डॉ. गौरव बिस्सा** - सहआचार्य, विभागाध्यक्ष, प्रबंध अध्ययन विभाग, राजकीय अभियांत्रिकी महाविद्यालय, बीकानेर (राज.)
* **डॉ. बीना शर्मा** - पूर्व विभागाध्यक्ष, हिन्दी विभाग, सावित्री कन्या महाविद्यालय, अजमेर
* **प्रो. शोभा आर. मिश्रा** - आचार्य एवं विभागाध्यक्ष, दर्शनशास्त्र विभाग, माधव महाविद्यालय, उज्जैन
* **डॉ. वेद प्रकाश विद्यार्थी** - पूर्व सहायक निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय, नई दिल्ली।

☆ उप सम्पादक
डॉ. रीता पारीक
प्राचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ प्रबन्ध सम्पादक
डॉ. मृत्युंजय शर्मा
सह-आचार्य
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड टेक्नोलॉजी, अजमेर

☆ सहायक सम्पादक
डॉ. निष्काम शर्मा

☆ शब्द संयोजन
मुकेश कुमार माहेश्वरी

☆ सम्पादकीय/सचिव
व्यवस्थापकीय कार्यालय
सृजन संस्थान,
आचमन, वेद विहार,
लोहाखान, अजमेर-06
दूरभाष : 0145-2426610
e-mail : rasoajmjournal@gmail.com

☆ प्रकाशक :
पुष्पा शर्मा
सृजन संस्थान,
द्वारा आचमन पब्लिकेशन्स,
अजमेर

☆ मुद्रक :
मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स,
केसरगंज, अजमेर

☆ कम्प्यूटराइज्ड सेटिंग :
श्रीनिवास प्रिन्टोग्राफिक्स
132, पंचवटी कॉलोनी,
अजमेर

सहयोग दर

* वार्षिक सदस्यता - 500 रु. (चार अंक) संस्थाओं हेतु - 600 रु. (चार अंक)
कृपया चैक/ड्राफ्ट/मनीऑर्डर श्रीमती पुष्पा शर्मा, प्रकाशक, आचमन पब्लिकेशन्स, अजमेर- 305006 के नाम भेजें।

प्रकाशक-श्रीमती पुष्पा शर्मा, 51/1509, वेद विहार, लोहाखान, अजमेर द्वारा मैसर्स सृजन संस्थान, अजमेर की ओर से प्रकाशित एवं मुद्रक-श्रीमती उषा गर्ग द्वारा मैसर्स आर्य प्रिन्टर्स, केसरगंज, अजमेर से मुद्रित।

भारतीय ज्ञान परम्परा में बरगद वृक्ष की प्रासंगिकता

सुर्मिला यादव
सहायक आचार्य (शिक्षा विभाग)
हुकुमचन्द नोबल इंस्टीट्यूट ऑफ साइंस एण्ड
टेक्नोलॉजी, अजमेर

भारतीय ज्ञान परम्परा में बरगद अर्थात् वटवृक्ष केवल एक वनस्पति नहीं, बल्कि विचार, स्मृति, आस्था और निरन्तरता का सजीव प्रतीक रहा है। इसकी प्रासंगिकता भारतीय सभ्यता के बौद्धिक, सांस्कृतिक, धार्मिक और शैक्षिक जीवन में गहराई से अंतर्निहित है। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक समय तक बरगद का वृक्ष ज्ञान के विस्तार, गुरु-शिष्य परम्परा और समाज की सामूहिक चेतना का मौन साक्षी रहा है।

भारतीय परम्परा में शिक्षा का मूल स्वरूप आश्रमों और गुरुकुलों से जुड़ा रहा है। इन गुरुकुलों का कोई भव्य भवन नहीं होता था, बल्कि प्रकृति ही शिक्षा का आधार थी। विशाल वटवृक्ष की छाया में बैठकर गुरु शिष्यों को विद्या, जीवन-मूल्य और धर्म का बोध कराते थे। बरगद की फैलती शाखाएँ, गहरी जड़ें और दीर्घायु प्रकृति उसे ज्ञान के उपयुक्त प्रतीक के रूप में स्थापित करती हैं। उसकी छाया शीतलता और संरक्षण का अनुभव कराती है, जैसे गुरु की कृपा शिष्य को जीवन-पथ पर आश्रय देती है। इसीलिए भारतीय ज्ञान परम्परा में वटवृक्ष को 'गुरु वृक्ष' की भाँति भी देखा जा सकता है।

आधुनिक शिक्षा संस्थानों में भी यह परम्परा प्रतीकात्मक रूप में जीवित है। प्रयागराज स्थित ईविंग क्रिश्चियन कॉलेज और इलाहाबाद विश्वविद्यालय के परिसरों में स्थित प्राचीन और विशाल बरगद वृक्ष इस बात के साक्ष्य हैं कि ज्ञान की परम्परा काल और संस्कृतियों से परे जाकर निरन्तर प्रवाहित होती रहती है। इलाहाबाद विश्वविद्यालय के परिसर में स्थित वटवृक्ष न केवल प्राकृतिक सौन्दर्य को बढ़ाता है, बल्कि विश्वविद्यालय की वैचारिक आत्मा को भी अभिव्यक्त करता है। विश्वविद्यालय के प्रतीक-चिह्न में अंकित लैटिन ध्येय वाक्य 'Quot rami tot arbores', जिसका अर्थ है 'जितनी शाखाएँ उतने वृक्ष' बरगद की उसी विशेषता को रूपायित करता है कि उसकी शाखाएँ भूमि से स्पर्श कर स्वतंत्र वृक्ष का रूप ले लेती हैं। इस प्रतीक के माध्यम से यह भाव व्यक्त किया गया है कि विश्वविद्यालय का प्रत्येक छात्र आगे चलकर स्वयं एक संस्थान, एक विचार-केन्द्र और एक ज्ञान-वृक्ष बन सकता है। यही भाव अब संस्कृत में 'यावल्य: शाखास्तावन्तो वृक्षा:' के रूप में भी अभिव्यक्त किया गया है, जो भारतीय ज्ञान-परम्परा से उसका सीधा सम्बन्ध स्थापित करता है।

धार्मिक और पौराणिक संदर्भों में बरगद का महत्व और भी गहन हो जाता है। प्रयागराज में गंगा-यमुना संगम के समीप स्थित अकबर के किले के भीतर विद्यमान अक्षयवट भारतीय आस्था का एक अत्यंत प्राचीन केन्द्र है। यह वृक्ष केवल एक ऐतिहासिक धरोहर नहीं, बल्कि शाश्वतता और अविनाशिता का प्रतीक

शोध-पत्र में उल्लिखित सन्दर्भ एवं विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है, सम्पादक नहीं।

माना जाता है। पौराणिक मान्यता के अनुसार, प्रलय के समय जब सम्पूर्ण सृष्टि जलमग्न हो जाती है, तब भगवान विष्णु या कृष्ण बालरूप में अक्षयवट के पत्ते पर विराजमान होकर सृष्टि के रहस्य का अवलोकन करते हैं। इस कथा में वटवृक्ष को उस आधार के रूप में देखा गया है जो विनाश के बीच भी अस्तित्व और चेतना को सुरक्षित रखता है।

इसी शाश्वत भाव के कारण बरगद को 'अक्षयवट' कहा गया है अर्थात् ऐसा वृक्ष जो कभी नष्ट नहीं होता। इसकी जड़ें आकाश से धरती की ओर बढ़ती हैं, मानो यह ऊपर और नीचे, भौतिक और आध्यात्मिक, लौकिक और अलौकिक—सभी स्तरों को जोड़ रहा हो। भारतीय ज्ञान परम्परा में यह दृष्टि अत्यंत महत्वपूर्ण है, क्योंकि यहाँ ज्ञान को केवल पुस्तकीय सूचना नहीं, बल्कि जीवन और ब्रह्माण्ड से जुड़े सत्य के रूप में समझा गया है।

प्रयागराज में सम्पन्न महाकुंभ के अवसर पर लाखों श्रद्धालुओं द्वारा अक्षयवट के दर्शन इस बात का प्रमाण हैं कि आधुनिक युग में भी वटवृक्ष की प्रासंगिकता समाप्त नहीं हुई है। विज्ञान, तकनीक और आधुनिक शिक्षा के युग में भी मनुष्य उस प्रतीक की ओर आकृष्ट होता है जो उसे स्थायित्व, निरन्तरता और मूल्यों से जोड़ता है।

दुनिया का सबसे बड़ा बरगद वृक्ष भारतीय प्राकृतिक विरासत का एक अद्भुत और जीवंत उदाहरण है, जो कोलकाता स्थित आचार्य जगदीश चंद्र बोस बॉटेनिकल गार्डन में स्थित है। यह वटवृक्ष केवल अपने आकार के कारण ही नहीं, बल्कि अपनी दीर्घायु, जैव-विविधता और सांस्कृतिक महत्ता के कारण भी विश्वविख्यात है। सामान्य दृष्टि से देखने पर यह एक अकेला वृक्ष प्रतीत ही नहीं होता, बल्कि घने वन के समान अनुभव कराता है। इसकी असंख्य शाखाएँ, चारों ओर फैली जटाएँ और विस्तृत फैलाव मनुष्य को विस्मय में डाल देता है कि यह सब एक ही वृक्ष का विस्तार है।

मान्यता है कि इस विशाल वटवृक्ष की स्थापना वर्ष 1787 ई. में की गई थी। उस समय इसकी आयु लगभग बीस वर्ष बताई जाती है। इस प्रकार वर्तमान में इसकी आयु लगभग ढाई सौ वर्ष के आसपास मानी जाती है। समय के साथ इसकी शाखाएँ धरती की ओर झुकती चली गईं और उनसे निकलने वाली जटाएँ भूमि में पहुँचकर जड़ों का रूप लेती चली गईं। यही कारण है कि यह वृक्ष निरन्तर फैलता गया और आज इसका स्वरूप एक वृक्ष से अधिक एक विस्तृत जैविक संरचना जैसा हो गया है।

यह विशाल बरगद लगभग 14,500 वर्गमीटर क्षेत्र में फैला हुआ है और इसकी ऊँचाई लगभग 24 मीटर बताई जाती है। इसकी तीन हजार से भी अधिक जटाएँ हैं, जो अब पूर्ण रूप से जड़ों में परिवर्तित हो चुकी हैं। इन जड़ों और शाखाओं के कारण यह वृक्ष अनेक स्तंभों पर खड़े एक प्राकृतिक मंडप जैसा दिखाई देता है। जब कोई व्यक्ति इसके भीतर प्रवेश करता है तो उसे ऐसा लगता है मानो वह किसी प्राकृतिक वन या उपवन में आ गया हो, न कि एक ही वृक्ष के भीतर खड़ा है। यही विशिष्टता इसे संसार का सबसे विशाल बरगद वृक्ष बनाती है।

इस वटवृक्ष का महत्व केवल उसके आकार तक सीमित नहीं है, बल्कि यह एक समृद्ध पारिस्थितिकी तंत्र भी है। आश्चर्यजनक रूप से इस एक वृक्ष पर पक्षियों की अस्सी से अधिक प्रजातियाँ निवास करती हैं। इसके अतिरिक्त कीट-पतंगों, छोटे जीवों और वनस्पतियों के लिए भी यह एक सुरक्षित आश्रय स्थल है। इस

प्रकार यह बरगद वृक्ष प्रकृति की उस सहजीवी परम्परा का उदाहरण है, जहाँ एक ही संरचना अनेक जीवन-रूपों को संरक्षण प्रदान करती है।

आज इस ऐतिहासिक और प्राकृतिक धरोहर को बॉटेनिकल सर्वे ऑफ इंडिया के प्रतीक-चिह्न के रूप में भी मान्यता प्राप्त है। यह वृक्ष भारतीय वनस्पति विज्ञान की पहचान और गौरव का प्रतीक बन चुका है। इसकी सुरक्षा और संरक्षण के लिए विशेष व्यवस्था की गई है। लगभग तेरह सदस्यों की एक समर्पित टीम इसकी देखरेख करती है, जिसमें वनस्पति शास्त्री, माली और अन्य तकनीकी कर्मचारी सम्मिलित हैं। समय-समय पर इस वृक्ष की वैज्ञानिक जाँच की जाती है, जिससे यह सुनिश्चित किया जा सके कि इसे किसी प्रकार की बीमारी, क्षति या पर्यावरणीय खतरे का सामना न करना पड़े।

वर्ष 2009 से इस बॉटेनिकल गार्डन का नामकरण महान वैज्ञानिक और वनस्पति विज्ञानी आचार्य जगदीश चंद्र बोस के सम्मान में किया गया। इसके साथ ही यह विशाल बरगद वृक्ष न केवल प्राकृतिक आश्चर्य के रूप में, बल्कि भारतीय वैज्ञानिक चेतना और पर्यावरणीय संवेदनशीलता के प्रतीक के रूप में भी प्रतिष्ठित हो गया। इस प्रकार कोलकाता का यह वटवृक्ष भारतीय ज्ञान, प्रकृति और संरक्षण की परम्परा को साकार रूप में प्रस्तुत करता है।

भारतीय लोकजीवन, लोकसाहित्य और सांस्कृतिक चेतना में बरगद का वृक्ष केवल एक प्राकृतिक संरचना नहीं, बल्कि आस्था, जीवन-दर्शन और सामाजिक स्मृति का सजीव प्रतीक है। गाँवों की चौपाल से लेकर मंदिरों, तीर्थों और रास्तों के किनारे तक बरगद की उपस्थिति भारतीय समाज के सामूहिक जीवन से गहराई से जुड़ी रही है। इसकी विशाल छाया में पंचायतें लगी हैं, यात्रियों ने विश्राम किया है और पीढ़ियों ने जीवन के सुख-दु:ख साझा किए हैं। इसी कारण लोकमानस में बरगद को पवित्र, संरक्षक और कल्याणकारी वृक्ष के रूप में स्वीकार किया गया है।

भाषा और नामकरण की दृष्टि से भी बरगद की महत्ता स्पष्ट दिखाई देती है। हिंदी में इसे 'बड़' कहा जाता है, जबकि संस्कृत साहित्य में इसके अनेक नाम मिलते हैं, जैसे—वटवृक्ष, न्यग्रोध, बहुपात, वृक्षनाथ, यमप्रिय:, जटाल: और महाछाय:। ये सभी नाम इसके विभिन्न गुणों को प्रकट करते हैं। 'महाछाय:' इसके विशाल छायादार स्वरूप का संकेत देता है, 'बहुपात' इसकी असंख्य पत्तियों और शाखाओं की ओर इशारा करता है, वहीं 'वृक्षनाथ' इसे वृक्षों का स्वामी सिद्ध करता है। इसकी दीर्घायु और अविनाशी प्रकृति के कारण इसे अक्षयवट भी कहा गया है, जो लोकविश्वासों और पौराणिक कथाओं में विशेष स्थान रखता है। वनस्पति विज्ञान में इसे 'फाइकस बेंघालेंसिस' के नाम से जाना जाता है, जिससे यह स्पष्ट होता है कि यह भारतीय उपमहाद्वीप की विशिष्ट वनस्पति परम्परा का प्रतिनिधि वृक्ष है।

बरगद भारत का राष्ट्रीय वृक्ष है, और यह सम्मान केवल इसके आकार या सौन्दर्य के कारण नहीं, बल्कि इसके जीवनदायी और संरक्षणकारी गुणों के कारण मिला है। यह एक सदाबहार वृक्ष है, जो वर्षभर हरा-भरा रहता है और अपने विशिष्ट प्ररोहों, अर्थात् हवा में लटकती जड़ों, के लिए विश्वविख्यात है। इसकी जड़ें केवल नीचे ही नहीं जातीं, बल्कि क्षैतिज रूप में दूर-दूर तक फैलती हैं और भूमि को मजबूती प्रदान करती हैं। इसके पत्तों और तनों से दूध जैसा रस निकलता है, जिसे लेटेक्स कहा जाता है, जो इसके जैविक स्वरूप की एक महत्वपूर्ण विशेषता है।

धार्मिक दृष्टि से बरगद का स्थान अत्यंत ऊँचा है। भारतीय धर्मग्रंथों में इसे त्रिमूर्ति का प्रतीक माना गया है। मान्यता है कि इसकी जड़ों में ब्रह्मा, तने और छाल में विष्णु तथा शाखाओं में शिव का वास होता है। इस प्रकार बरगद सम्पूर्ण सृष्टि-चक्र—सृजन, संरक्षण और संहार—का प्रतीक बन जाता है। अग्निपुराण में बरगद को उत्सर्जन और सृजनशीलता का द्योतक बताया गया है। इसी विश्वास के कारण संतान-प्राप्ति की कामना रखने वाले दंपति बरगद की पूजा करते हैं। यह वृक्ष जीवन की निरन्तरता और वंश-वृद्धि का प्रतीक माना गया है, इसलिए परम्परागत भारतीय समाज में इसे काटना पाप समझा जाता है।

लोकजीवन में बरगद का उपयोग केवल धार्मिक या सांस्कृतिक स्तर तक सीमित नहीं रहा है। अकाल और संकट के समय इसके पत्तों का उपयोग पशुओं के चारे के रूप में किया जाता रहा है, जिससे यह वृक्ष जीवनरक्षक के रूप में भी स्थापित हुआ। इसकी विशाल छाया मनुष्य और पशु दोनों के लिए आश्रय का कार्य करती है। लोकगीतों और कथाओं में बरगद को कभी साक्षी, कभी संरक्षक और कभी धैर्य व स्थायित्व के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत किया गया है।

वनस्पति विज्ञान की दृष्टि से बरगद एक बहुवर्षीय, विशाल और स्थलीय द्विबीजपत्री सपुष्पक वृक्ष है। इसका तना सीधा, कठोर और मजबूत होता है। इसकी शाखाओं से निकलने वाली जड़ें हवा में लटकती हैं और धीरे-धीरे बढ़ते हुए भूमि में प्रवेश कर स्तंभ का रूप ले लेती हैं। इन्हें बरोह या प्राप जड़ कहा जाता है। यही जड़ें इसे अत्यंत विस्तृत और मजबूत संरचना प्रदान करती हैं। इसका फल छोटा, गोलाकार और लाल रंग का होता है, जबकि इसका बीज अत्यंत सूक्ष्म होता है। यह तथ्य विशेष रूप से उल्लेखनीय है कि इतना छोटा बीज इतना विशाल वृक्ष बन जाता है, जो भारतीय दार्शनिक दृष्टि से भी 'सूक्ष्म में विराट' के सिद्धांत को साकार करता है। इसकी पत्तियाँ चौड़ी और लगभग अंडाकार होती हैं, और पत्ती, शाखा या कली को तोड़ने पर दूधिया रस निकलता है, जिसे लेटेक्स अम्ल कहा जाता है।

अक्षयवट की परिकल्पना भारतीय सांस्कृतिक चेतना में अत्यंत प्राचीन, गहन और बहुस्तरीय है। इसका उल्लेख केवल लोकविश्वासों तक सीमित नहीं है, बल्कि संस्कृत काव्य, पुराण साहित्य और ऐतिहासिक यात्रा-वृत्तांतों में भी ससम्मान प्राप्त होता है। महाकवि कालिदास के महाकाव्य *रघुवंश* में अक्षयवट के संदर्भ मिलते हैं, जहाँ यह वृक्ष स्थायित्व, शाश्वतता और राजवंश की निरन्तरता के प्रतीक रूप में उभरता है। इसी प्रकार सातवीं शताब्दी के चीनी यात्री ह्वेन त्सांग ने अपने भारत-भ्रमण के विवरणों में प्रयाग के अक्षयवट का उल्लेख किया है। उनके यात्रा-वृत्तांत से यह स्पष्ट होता है कि यह वृक्ष उस समय भी श्रद्धा और आस्था का प्रमुख केन्द्र था और दूर-दूर से यात्री इसके दर्शन के लिए आते थे। इससे यह सिद्ध होता है कि अक्षयवट की पवित्रता केवल पौराणिक नहीं, बल्कि ऐतिहासिक काल में भी सामाजिक यथार्थ का अंग थी।

भारतीय परम्परा में वटवृक्ष के अनेक पवित्र रूप स्वीकार किए गए हैं। भारतवर्ष में क्रमशः चार पौराणिक और अत्यंत पवित्र वटवृक्ष माने जाते हैं—सोरों (शूकरक्षेत्र) का गृद्धवट, प्रयाग का अक्षयवट, उज्जैन का सिद्धवट और वृंदावन का वंशीवट। ये सभी वृक्ष केवल भौगोलिक स्थलों के प्रतीक नहीं हैं, बल्कि वहाँ घटित धार्मिक, पौराणिक और सांस्कृतिक स्मृतियों से गहरे जुड़े हुए हैं। प्रयाग का अक्षयवट सृष्टि की अविनाशिता का प्रतीक है, उज्जैन का सिद्धवट साधना और सिद्धि से जुड़ा है, वृंदावन का वंशीवट कृष्ण-लीला और भक्ति परम्परा का केन्द्र है, जबकि गृद्धवट क्षेत्रीय लोकआस्थाओं और पौराणिक आख्यानों से सम्बद्ध है। इस प्रकार वटवृक्ष भारतीय भू-सांस्कृतिक मानचित्र में अनेक अर्थ-स्तरों के साथ प्रतिष्ठित है।

वामनपुराण में वनस्पतियों की उत्पत्ति को लेकर एक अत्यंत रोचक और प्रतीकात्मक कथा मिलती है। इस कथा के अनुसार आश्विन मास में जब भगवान विष्णु की नाभि से कमल प्रकट हुआ, तब अन्य देवताओं से भी विभिन्न वृक्ष उत्पन्न हुए। इसी क्रम में यक्षों के राजा मणिभद्र से वटवृक्ष की उत्पत्ति मानी गई। इस संदर्भ में पुराण का श्लोक उल्लेखनीय है—

'यक्षाणामधिस्यापि मणिभद्रस्य नारद।

वटवृक्षः समभव तस्मिस्तस्य रतिः सदा।।'

इस श्लोक का आशय यह है कि नारद के कथनानुसार यक्षों के अधिपति मणिभद्र से वटवृक्ष उत्पन्न हुआ और उसमें उनकी विशेष प्रीति सदा बनी रही। यक्षों से इस निकट सम्बन्ध के कारण ही वटवृक्ष को 'यक्षवास', 'यक्षतरु' और 'यक्षवारूक' जैसे नामों से भी जाना गया। यक्ष भारतीय परम्परा में प्रकृति, धन और उपज के संरक्षक माने जाते हैं, अतः वटवृक्ष का उनसे सम्बन्ध इसे समृद्धि, संरक्षण और गूढ़ शक्तियों से जोड़ देता है।

पुराणों में इस प्रकार की अनेक प्रतीकात्मक कथाएँ मिलती हैं, जहाँ प्रकृति, वनस्पति और देवताओं के बीच एक जीवंत और पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित किया गया है। जिस प्रकार अश्वत्थ अर्थात् पीपल को विष्णु का प्रतीक कहा गया है, उसी प्रकार वटवृक्ष को जटाधारी पाशुपति शंकर का साक्षात् रूप मान लिया गया है। इसकी जटाओं के समान लटकती हुई जड़ें शिव की जटाओं का स्मरण कराती हैं, और इसकी विशाल, धैर्यवान, अडिग आकृति शिव के स्थिर और तपस्वी स्वरूप से साम्य रखती है। इस कारण वटवृक्ष केवल वैष्णव परम्परा ही नहीं, बल्कि शैव परम्परा में भी समान रूप से आदर प्राप्त करता है।

हरिवंश पुराण में भी वटवृक्ष का एक अत्यंत भव्य रूप वर्णित है। इसमें 'भंडीरवट' नामक एक विशाल वृक्ष का उल्लेख आता है, जिसकी भव्यता से स्वयं भगवान मुग्ध हो गए और उन्होंने उसकी छाया में निवास करने का निश्चय किया। हरिवंश का श्लोक—

'न्यग्रोधवटाग्रामं भाण्डीरं नाम नामतः।

दृष्ट्वा तत्र मतिं चक्रे निवासाय ततः प्रभुः।।'

इस तथ्य को रेखांकित करता है कि वटवृक्ष को भगवान के विश्राम और निवास योग्य स्थान माना गया। इससे यह स्पष्ट होता है कि वटवृक्ष केवल मनुष्यों के लिए ही नहीं, बल्कि दैवी उपस्थिति के लिए भी उपयुक्त और पवित्र समझा गया।

पुराणों और काव्य-साहित्य में 'सुभद्रवट' नामक एक अन्य वटवृक्ष का भी उल्लेख मिलता है, जिसकी एक डाली गरुड़ द्वारा तोड़ी गई थी। इस प्रकार के आख्यान यह संकेत देते हैं कि वटवृक्ष केवल स्थिर प्रकृति नहीं, बल्कि कथाओं और घटनाओं से जुड़ा एक सजीव पात्र बन जाता है।

रामायण में अक्षयवट की कथा तो लोकजीवन में अत्यंत प्रचलित है। यद्यपि परवर्ती साहित्य में इसे 'अक्षयवट' कहा गया, किंतु वाल्मीकि रामायण में इसे 'यामन्यग्रोध' के नाम से उल्लेखित किया गया है। यह वटवृक्ष यमुना नदी के तट पर स्थित था और अत्यंत विशाल तथा घने पत्तों वाला था। इसकी छाया इतनी शीतल और सघन थी कि उसे 'यामन्यग्रोध' कहा गया। 'याम' शब्द संभवतः उस गहन, अथाह अंधकार

और शीतलता की ओर संकेत करता है, जो इसकी विशाल छाया के नीचे अनुभव होती थी, साथ ही इसके गहरे रंग की पत्रावली का भी संकेत देता है। वनवास के समय जब राम, लक्ष्मण और सीता यमुना पार कर दूसरे तट पर उतरते हैं, तो सीता उस विशाल वटवृक्ष को देखकर श्रद्धापूर्वक प्रणाम करती हैं। यह प्रसंग वटवृक्ष की पवित्रता, शरणदाता स्वरूप और साक्षी-भाव को अत्यंत मार्मिक ढंग से प्रस्तुत करता है।

अक्षयवट और वटवृक्ष की पवित्रता भारतीय धार्मिक चेतना में केवल हिंदू परम्परा तक सीमित नहीं है, बल्कि जैन और बौद्ध धर्मों में भी इसे समान श्रद्धा के साथ स्वीकार किया गया है। यह तथ्य स्वयं इस बात का प्रमाण है कि वटवृक्ष भारतीय उपमहाद्वीप की साझा सांस्कृतिक विरासत का अंग है, जहाँ विभिन्न धार्मिक परम्पराएँ प्रकृति के प्रतीकों के माध्यम से एक-दूसरे से जुड़ती दिखाई देती हैं। वटवृक्ष की दीर्घायु, स्थिरता और आश्रय देने वाली प्रकृति ने उसे ऐसे सार्वकालिक प्रतीक के रूप में स्थापित किया, जिसे भिन्न-भिन्न मतावलम्बियों ने अपने-अपने धार्मिक अनुभवों से जोड़ा।

बौद्ध परम्परा में भी अक्षयवट का विशेष महत्व बताया गया है। जनश्रुतियों के अनुसार भगवान बुद्ध ने कैलाश पर्वत के निकट प्रयाग क्षेत्र में स्थित अक्षयवट का एक बीज बोया था। यह कथा बौद्ध दृष्टि से करुणा, जागरूकता और जीवन की निरन्तरता के प्रतीकात्मक अर्थ से जुड़ती है। वृक्ष-रोपण को बौद्ध धर्म में पुण्य का कार्य माना गया है, और इस संदर्भ में अक्षयवट का बीज बोना बौद्ध करुणा-दृष्टि का प्रतीक बन जाता है। यह परम्परा यह भी दर्शाती है कि बौद्ध धर्म में प्रकृति को आत्मबोध और ध्यान के साधन के रूप में देखा गया।

जैन परम्परा में अक्षयवट का सम्बन्ध और भी गहन तपस्या-संस्कृति से जुड़ा है। जैनियों की मान्यता है कि प्रथम तीर्थंकर ऋषभदेव ने अक्षयवट के नीचे तपस्या की थी। इसी कारण प्रयाग में उस स्थान को ऋषभदेव तपस्थली या तपोवन कहा जाता है। जैन दर्शन में तप और संयम का अत्यधिक महत्व है, और वटवृक्ष की स्थिर, अडिग तथा सहनशील प्रकृति जैन तपस्या के आदर्शों से पूर्णतः साम्य रखती है। इस दृष्टि से वटवृक्ष जैन साधना का मौन साक्षी और प्रतीक बन जाता है।

भारत के अन्य पवित्र नगरों और तीर्थस्थलों में भी वटवृक्ष को अक्षयवट के रूप में पूजने की परम्परा मिलती है। वाराणसी और गया में ऐसे वटवृक्ष हैं, जिन्हें श्रद्धालु अक्षयवट मानकर पूजा-अर्चना करते हैं। गया में पिंडदान और श्राद्ध कर्मों के साथ वटवृक्ष का सम्बन्ध विशेष रूप से जोड़ा गया है, जहाँ इसे पितरों के प्रति श्रद्धा और स्मृति का प्रतीक माना जाता है। इसी प्रकार वाराणसी में वटवृक्ष मोक्ष और अविनाशी चेतना से जुड़ा हुआ माना जाता है।

कुरुक्षेत्र के निकट स्थित ज्योतिसर में विद्यमान वटवृक्ष को भी अत्यंत पवित्र माना जाता है। मान्यता है कि यही वह स्थान है जहाँ भगवान कृष्ण ने अर्जुन को श्रीमद्भगवद्गीता का उपदेश दिया था। इस वटवृक्ष को उस महाउपदेश का साक्षी माना जाता है, जिसने भारतीय दर्शन और जीवन-दृष्टि को गहराई से प्रभावित किया। यहाँ वटवृक्ष केवल एक वृक्ष नहीं, बल्कि धर्म, कर्म और ज्ञान के शाश्वत संदेश का सजीव प्रतीक बन जाता है।

इसी प्रकार सोरों स्थित शूकरक्षेत्र में पौराणिक रूप से पवित्र गृद्धवट का उल्लेख मिलता है। यहाँ वराह अवतार और पृथ्वी के संवाद की कथा प्रचलित है। यह स्थल वटवृक्ष को सृष्टि-रक्षा और पुनर्स्थापना

के प्रतीक के रूप में प्रस्तुत करता है। वराह द्वारा पृथ्वी का उद्धार और गृद्धवट के साथ उसका सम्बन्ध इस वृक्ष को ब्रह्माण्डीय संतुलन के प्रतीक के रूप में प्रतिष्ठित करता है।

भारतीय उपमहाद्वीप से बाहर भी बरगद के वृक्ष का महत्व अनेक एशियाई और प्रशांत क्षेत्र की कथाओं तथा धर्मों में देखा जा सकता है। दक्षिण-पूर्व एशिया में बरगद को आत्माओं का वास-स्थल, संरक्षणदाता और ज्ञान का प्रतीक माना गया है। बौद्ध धर्म के पालि ग्रंथों में भी बरगद और उससे सम्बद्ध वृक्षों के अनेक संदर्भ मिलते हैं, जहाँ वे ध्यान, उपदेश और करुणा से जुड़े स्थलों के रूप में वर्णित हैं। इससे स्पष्ट होता है कि बरगद का वृक्ष न केवल भारतीय, बल्कि व्यापक एशियाई सांस्कृतिक चेतना में भी पवित्रता और आध्यात्मिक अर्थ से युक्त रहा है।

बरगद का वृक्ष एक अत्यंत गुणकारी और जीवनोपयोगी वृक्ष है। संभवतः इन्हीं गुणों को अनुभव और परख के माध्यम से समझकर भारतीय जनसमाज ने वटवृक्ष को पवित्र वृक्ष की संज्ञा दी और कृतज्ञता के भाव से उसके पूजन की परम्परा विकसित की। भारतीय संस्कृति में किसी भी वस्तु या तत्व को पवित्र मानने के पीछे केवल अंधविश्वास नहीं, बल्कि उसके प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष उपकारों की गहरी समझ निहित रही है। बरगद के संदर्भ में यह बात और भी स्पष्ट दिखाई देती है, क्योंकि यह वृक्ष न केवल आध्यात्मिक और सांस्कृतिक स्तर पर, बल्कि वैज्ञानिक और चिकित्सकीय दृष्टि से भी अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुआ है।

आधुनिक वैज्ञानिक अनुसंधानों और परम्परागत चिकित्सा पद्धतियों—विशेषकर आयुर्वेद और लोकचिकित्सा—में बरगद के अनेक औषधीय गुणों का उल्लेख मिलता है। नेपाल और भारत के अनेक ग्रामीण और आदिवासी क्षेत्रों में आज भी लोग विभिन्न रोगों और स्वास्थ्य समस्याओं के उपचार के लिए बरगद की जड़ों, पत्तियों, छाल, बीज और फल का उपयोग करते हैं। सामान्य दस्त और पेट संबंधी विकारों के उपचार के लिए इसके नए पत्तों को पानी में भिगोकर एक कसैला (एस्ट्रिंजेंट) घोल तैयार किया जाता है, जो आँतों की कार्यप्रणाली को सुधारता है और सूजन की स्थिति में लाभ पहुँचाता है। यह उपचार पीढ़ियों से आज़माया गया है और लोकअनुभव में प्रभावी माना जाता है।

बरगद की जड़ों को चबाने से मसूड़ों से खून आना, दाँतों की सड़न और मसूड़ों की बीमारियों में लाभ मिलता है। इसके बीज मुँह की दुर्गंध को दूर करने में सहायक होते हैं और प्राकृतिक दंतमंजन के समान कार्य करते हैं। इस प्रकार वटवृक्ष की जड़ें और बीज मुख-स्वास्थ्य से जुड़ी अधिकांश समस्याओं के निराकरण में सहायक सिद्ध होते हैं। यही कारण है कि ग्रामीण समाज में दंत-स्वच्छता के लिए बरगद का उपयोग लंबे समय से किया जाता रहा है।

बरगद के पेड़ की छाल को इम्यूनिटी बढ़ाने का एक विश्वसनीय स्रोत माना जाता है। इसके रस में सूजन-रोधी गुण पाए जाते हैं और इसका प्रयोग गठिया जैसे रोगों की चिकित्सा में किया जाता है। यह शरीर में होने वाली सूजन को कम करने में सहायक माना गया है। लोकचिकित्सा में यह भी कहा जाता है कि बरगद के फल से निकला अर्क मस्तिष्क में सेरोटोनिन के स्तर को बढ़ाता है, जिससे अवसाद और मानसिक तनाव में कमी आती है। इसके अतिरिक्त, बरगद की छाल अच्छे कोलेस्ट्रॉल की मात्रा को बनाए रखते हुए खराब कोलेस्ट्रॉल को कम करने में सहायक बताई जाती है। वैद्यजन मधुमेह के उपचार में बरगद की जड़ का काढ़ा पीने की सलाह देते हैं। इस प्रकार बरगद का वृक्ष मानव स्वास्थ्य के लिए एक प्राकृतिक

औषधालय के समान है।

इन वैज्ञानिक और चिकित्सकीय गुणों के साथ-साथ भारतीय लोकमानस में बरगद के प्रति जो श्रद्धा और पूजाभाव दिखाई देता है, वह जड़ और चेतन—दोनों के प्रति कृतज्ञता की भावना का प्रतीक है। भारतीय समाज में कृतज्ञता केवल मनुष्यों तक सीमित नहीं रहती, बल्कि प्रकृति और उसके उपादानों तक विस्तृत हो जाती है। कहीं सावित्री और सत्यवान की कथा के माध्यम से वटवृक्ष को जीवन, प्रेम और समर्पण से जोड़ा गया, तो कहीं विशिष्ट तिथियों पर उसके पूजन का विधिवत् विधान किया गया। वटवृक्ष-व्रत की परम्परा में स्त्रियाँ अपने परिवार की दीर्घायु और सुख-समृद्धि की कामना करती हैं, जो इस वृक्ष की दीर्घायु और स्थायित्व से गहराई से जुड़ी हुई है।

पुराणों में भगवान विष्णु का प्रलयकाल में वटपत्र पर शयन करना वटवृक्ष को सृष्टि की निरन्तरता और अविनाशिता का प्रतीक बनाता है। सावित्री-सत्यवान की कथा में वटवृक्ष साक्षी और जीवनदाता के रूप में उपस्थित होता है। लोकजीवन में यह वृक्ष केवल पूजा का विषय नहीं, बल्कि दैनिक जीवन का अभिन्न अंग भी है। गाँवों में वटवृक्ष सभी के लिए एक सामूहिक आश्रयस्थल होता है। इसकी छाया में चौपाल लगती है, पंचायतें होती हैं और सामाजिक निर्णय लिए जाते हैं। तपती हुई गर्मी में इसकी घनी छाया मनुष्य और पशु दोनों को राहत प्रदान करती है। गाँव की स्त्रियाँ इसकी शाखाओं पर झूला डालकर मनोरंजन करती हैं, जिससे यह वृक्ष आनंद और सामूहिकता का भी केन्द्र बन जाता है।

बरगद की छाल, पत्तियों से निकलने वाला दूध, बीज और फल—ये सभी सामान्य रोगों के उपचार में गाँव के लिए सहज उपलब्ध साधन होते हैं। इस प्रकार वटवृक्ष केवल धार्मिक या सांस्कृतिक प्रतीक न रहकर, जीवन के प्रत्येक चरण में उपयोगी सिद्ध होता है। वह मनुष्य को आश्रय देता है, रोग से बचाता है, सामाजिकता को बढ़ावा देता है और कृतज्ञता का भाव उत्पन्न करता है।

इसी समग्र उपयोगिता और उपकारशीलता के कारण बरगद का वृक्ष भारतीय जीवन और चेतना का अभिन्न अंग बन गया है। यह वृक्ष भारतीय संस्कृति की उस दृष्टि को मूर्त रूप देता है, जिसमें प्रकृति को केवल उपभोग की वस्तु नहीं, बल्कि पूज्य, संरक्षक और सहचर के रूप में देखा गया है।

भारतीय सांस्कृतिक और साहित्यिक परम्परा में बरगद का वृक्ष अत्यंत महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। यह केवल एक प्राकृतिक वृक्ष नहीं, बल्कि जीवन, स्थायित्व, संरक्षण, परम्परा और सामूहिक स्मृति का सजीव प्रतीक रहा है। भारतीय समाज में जहाँ जीवन पीढ़ी-दर-पीढ़ी परम्पराओं के सहारे आगे बढ़ता है, वहीं बरगद का दीर्घायु और फैलता हुआ स्वरूप उस निरन्तरता का प्रतीक बन जाता है। इसकी सघन छाया आश्रय और सुरक्षा का भाव उत्पन्न करती है, इसलिए यह ग्राम्य जीवन और लोकअनुभवों से गहराई से जुड़ा हुआ दिखाई देता है।

प्राचीन हिंदी कविता और लोकसाहित्य में बरगद का उल्लेख विशेष रूप से भक्ति, ग्राम्य जीवन और स्त्री-अनुभवों के संदर्भ में मिलता है। लोकगीतों में यह वृक्ष केवल पृष्ठभूमि नहीं रहता, बल्कि कथा का सक्रिय साक्षी बन जाता है। विशेषकर सावित्री-सत्यवान की कथा में बरगद नारी-शक्ति, पतिव्रता धर्म और अटूट दाम्पत्य प्रेम का प्रतीक बनकर उभरता है। लोकगीत में सावित्री का बरगद के नीचे बैठकर तपस्या करना और यमराज से अपने पति के प्राण वापस लेना भारतीय नारी के साहस, श्रद्धा और आत्मबल को

उजागर करता है।

लोकगीत के ये बोल—

'बरगद के नीचे बइठी सावित्री, पति के प्राण वाचलि।

यमराज के रोके राह, भक्ति से जीवन बचलि।'

इस भाव को अत्यंत सहज और मार्मिक रूप में प्रस्तुत करते हैं। सावित्री का बरगद के नीचे बैठना केवल एक भौगोलिक स्थिति नहीं है, बल्कि यह उस वृक्ष की छाया में प्राप्त आध्यात्मिक शक्ति और धैर्य का संकेत है। यमराज की राह रोकना नारी की निर्भीकता और भक्ति की विजय का प्रतीक बन जाता है, जहाँ प्रेम और आस्था मृत्यु पर भी विजय पा लेते हैं।

भारतीय जनमानस में वट-सावित्री व्रत की कथा इतनी गहराई से रची-बसी है कि यह परम्परा आज भी पूरे उत्साह और श्रद्धा के साथ निभाई जाती है। प्रत्येक वर्ष ज्येष्ठ मास की अमावस्या को विवाहित स्त्रियाँ अपने पति की दीर्घायु और परिवार की सुख-समृद्धि के लिए वट-सावित्री व्रत रखती हैं। इस दिन सुहागिनें बरगद के वृक्ष की विधिपूर्वक पूजा करती हैं, उसकी परिक्रमा करती हैं और कच्चे सूत को उसके तने के चारों ओर लपेटती हैं। सात बार परिक्रमा करना दाम्पत्य जीवन की सात प्रतिज्ञाओं और जीवन-चक्र की पूर्णता का प्रतीक माना जाता है।

यह व्रत केवल एक धार्मिक अनुष्ठान भर नहीं है, बल्कि उसमें आस्था, प्रेम, निष्ठा और पारिवारिक संबंधों की दृढ़ता का भाव निहित है। व्रत के अवसर पर सावित्री-सत्यवान की कथा बड़े श्रद्धाभाव से सुनी और सुनाई जाती है, जिससे स्त्रियों को अपने जीवन में धैर्य, समर्पण और आत्मबल की प्रेरणा मिलती है। यह कथा पीढ़ी-दर-पीढ़ी स्त्री-स्मृति और सांस्कृतिक चेतना का हिस्सा बनती चली गई है।

लोकमान्यता है कि वटवृक्ष के नीचे ही यमराज ने सावित्री को वरदान देकर उसके पति सत्यवान के प्राण लौटाए थे। इसी विश्वास के कारण वटवृक्ष की पूजा और कथा-पाठ को व्रत की पूर्णता के लिए अनिवार्य माना जाता है। बरगद यहाँ केवल एक वृक्ष नहीं रह जाता, बल्कि वह जीवन और मृत्यु के बीच सेतु, प्रेम और भक्ति का साक्षी तथा स्त्री-शक्ति का प्रतीक बन जाता है।

भोजपुरी अंचल के लोकजीवन और लोकसाहित्य में बरगद का वृक्ष अत्यंत आत्मीय और संवेदनशील रूप में उपस्थित दिखाई देता है। यहाँ बरगद केवल प्रकृति का अंग नहीं, बल्कि भावनाओं, विश्वासों और स्त्री-मन की आकांक्षाओं का सजीव प्रतीक बन जाता है। विशेष रूप से वट-सावित्री व्रत के अवसर पर गाए जाने वाले लोकगीतों में नारी के प्रेम, त्याग, साहस और आत्मबल का मार्मिक चित्रण मिलता है। इन गीतों में सावित्री की कथा लोकभाषा और लोकसंवेदना के साथ घुल-मिलकर एक जीवंत अनुभव बन जाती है।

भोजपुरी लोकगीत—

'बरगद के नीचे बइठल बानी, सती सावित्री बोलावेली।

यमराज से विनती करेली, पिया के प्राण बचावेली।'

उक्त गीत सावित्री के उस क्षण को उभारता है, जहाँ वह बरगद के नीचे बैठकर अपने पति के प्राणों की रक्षा के लिए यमराज से विनती करती है। यहाँ बरगद तपस्या का स्थल है, साक्षी है और शक्ति का केन्द्र

भी। गीत में प्रयुक्त सरल भाषा के भीतर गहरी आस्था छिपी है, जो यह दर्शाती है कि नारी की भक्ति और संकल्प के सामने मृत्यु का देवता भी विवश हो जाता है। इस लोकगीत में बरगद नारी-शक्ति का सहचर बनकर उभरता है।

अवध क्षेत्र के लोकगीतों में बरगद का रूप और भी प्रतीकात्मक हो जाता है। वहाँ बरगद के नीचे विवाह की लालसा और जीवन-संयोग की कल्पना अत्यंत मार्मिक ढंग से अभिव्यक्त की गई है—

'बरगदवा के नीचे होई बियाह, धरती माता लेबें साख।
सजनवा बनी बरगद देव, सुहागिन बनलि पाख।'

इस गीत में वर को 'बरगद देव' कहा गया है, जो स्थायित्व, संरक्षण और विश्वास का प्रतीक है, जबकि वधू को प्रकृति की सखी और धरती की संतान के रूप में चित्रित किया गया है। बरगद के नीचे विवाह की कामना जीवन को प्रकृति के सान्निध्य में बाँधने की आकांक्षा को प्रकट करती है। यह विवाह केवल दो व्यक्तियों का नहीं, बल्कि मनुष्य और प्रकृति के सामंजस्य का भी संकेत है।

भारतीय जनजीवन में बरगद का स्थान इसी कारण अत्यंत विशिष्ट है। वह केवल एक वृक्ष नहीं रहता, बल्कि संबंधों के विविध रूपों में ढल जाता है। वह पिता की भाँति आश्रय और शीतल छाया देता है, पति के समान आपदाओं में आत्मविश्वास और सुरक्षा का भाव जगाता है और समाज के लिए एक स्थिर आधार बनता है। गाँवों में बरगद के नीचे बैठकर जीवन के निर्णय होते हैं, दुख-सुख साझा किए जाते हैं और सामूहिक चेतना का निर्माण होता है।

इसी व्यापक अर्थवत्ता के कारण भारतीय ज्ञान परम्परा में बरगद को पीपल, बेल, आम और नीम जैसे पवित्र वृक्षों के समान ही महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है और उसके पूजन का विधान बना है। यह पूजन केवल धार्मिक कर्मकाण्ड नहीं, बल्कि प्रकृति के प्रति कृतज्ञता का प्रतीक है। भारतीय संस्कृति में कृतज्ञता का भाव केवल मनुष्यों तक सीमित नहीं रहता, बल्कि उन सभी तत्वों तक विस्तृत हो जाता है जो मानव जीवन को सहारा देते हैं—चाहे वे शुद्ध जल प्रदान करने वाली नदियाँ हों, आश्रय और औषधि देने वाले वृक्ष हों या अन्न उपजाने वाली धरती हो।

समग्र रूप से देखा जाए तो बरगद का वृक्ष भारतीय ज्ञान, संस्कृति, धर्म, लोकजीवन और साहित्य में केवल एक प्राकृतिक इकाई नहीं, बल्कि जीवन-दर्शन का सजीव प्रतीक है। उसकी दीर्घायु, विशाल छाया और निरंतर विस्तार ने उसे स्थायित्व, संरक्षण और परम्परा का प्रतीक बना दिया। पौराणिक कथाओं, रामायण-महाभारत, पुराणों, जैन-बौद्ध परम्पराओं और विदेशी यात्रियों के वृत्तांतों में अक्षयवट का उल्लेख यह सिद्ध करता है कि बरगद की पवित्रता सार्वकालिक और बहुधार्मिक रही है। लोकसाहित्य और लोकगीतों में वह नारी-शक्ति, पतिव्रता धर्म, प्रेम और आस्था का साक्षी बनता है, जबकि ग्राम्य जीवन में वह चौपाल, विश्राम और सामुदायिक चेतना का केन्द्र है। वैज्ञानिक और आयुर्वेदिक दृष्टि से भी बरगद औषधीय गुणों से युक्त एक जीवनोपयोगी वृक्ष है। इस प्रकार बरगद का पूजन अंधविश्वास नहीं, बल्कि प्रकृति के प्रति भारतीय समाज की कृतज्ञता, सहजीवन और संरक्षण की भावना का सांस्कृतिक रूप है, जो मनुष्य और प्रकृति के गहरे, आत्मीय और नैतिक संबंध को अभिव्यक्त करता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. *महर्षि वाल्मीकि, रामायण (अयोध्याकाण्ड, अरण्यकाण्ड), गीता प्रेस, गोरखपुर, 2019*
2. *व्यास मुनि, हरिवंश पुराण, विष्णु पर्व, गीता प्रेस, गोरखपुर, 2018*
3. *वेदव्यास, वामन पुराण, चौखम्बा प्रकाशन, वाराणसी, 2015*
4. *वेदव्यास, अग्नि पुराण, अध्याय 59 (वृक्ष-महात्म्य), गीता प्रेस, गोरखपुर, 2017*
5. *वेद व्यास, पद्म पुराण, सृष्टि खण्ड (वटवृक्ष महिमा), चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2014*
6. *जिनसेनाचार्य, आदिपुराण, भारतीय ज्ञानपीठ, नई दिल्ली, 2012*
7. *डॉ. वासुदेवशरण अग्रवाल, भारतीय संस्कृति के प्रतीक, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2002*
8. *डॉ. हजारीप्रसाद द्विवेदी, लोकजीवन और साहित्य, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2005*
9. *डॉ. रामविलास शर्मा, भारतीय संस्कृति और हिन्दी साहित्य, राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली, 2008*
10. *डॉ. कृष्णदेव उपाध्याय, भारतीय लोकसाहित्य, हिन्दी अकादमी, दिल्ली, 1998*
11. *डॉ. शिवकुमार मिश्र, भोजपुरी लोकगीतों की सांस्कृतिक चेतना, लोकभारती प्रकाशन, प्रयागराज, 2011*
12. *वासुदेव उपाध्याय, भारतीय लोकविश्वास, साहित्य भवन, इलाहाबाद, 1996*
13. *Xuanzang (Hiuen Tsang), Si-Yu-Ki: Buddhist Records of the Western World, Translated by Samuel Beal, Trübner & Co., London, 1884*
14. *Anonymous Buddhist Monks, The Pali Tipitaka (Vinaya Pitaka – Tree Worship References), Mahabodhi Society, Kolkata, 2009*
15. *K. M. Nadkarni, Indian Materia Medica, Popular Prakashan, Bombay, 1976*
16. *Botanical Survey of India (Govt. of India), Ficus benghalensis (Banyan Tree), Kolkata, 2010*
17. *Romila Thapar, Cultural History of India, Oxford University Press, New Delhi, 2014*
18. *Stella Kramrisch, The Presence of Siva, Princeton University Press, Princeton, 1981*